P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-1* September- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

विद्यासागर नौटियाल के उपन्यास ''स्वर्ग दद्दा! पाणि पाणि'' में दलित विमर्श

निर्मला देवी
एसोसिएट प्रोफेसर
विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
जनता वैदिक कॉलिज,
बड़ौत, बागपत

शिवानी
शोधार्थिनी
हिन्दी विभाग,
जनता वैदिक कॉलिज,
बड़ौत, बागपत

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में दलितों की कष्टमय स्थिति का बेबाकी से चित्रण किया गया है। इसमें दिखाने का प्रयास किया गया है कि दलितों को कैसे अछूत की संज्ञा देकर उन्हें प्रताड़ित किया जाता है। सवर्णों द्वारा समय–समय पर उनके साथ अत्याचार किए जाते हैं। उन्हें हीनतम दृष्टि से देखा जाता है। तथा उनके स्पर्श मात्र को भी अपवित्र समझा जाता था। दलितों को सवर्णों के समान जीवन जीने का कोई अधिकार नहीं होता ऐसी उच्च वर्ण के लोगों की धारणा थी। उनका धारा से पानी लेना भी सवर्णो को मंजूर नहीं था। सवर्ण लोग अपने स्वार्थ के लिए दलितों को अपने से पृथक कर देना चाहते है। ताकि प्रतिदिन की समस्या से छुटकारा मिल सके। इस प्रकार इस पत्र में दलितों की स्थिति को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द : दलित विमर्श, विद्यासागर नौटियाल, स्वर्ग दद्दा! पाणि पाणि।

प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध पत्र का विषय विद्यासागर नौटियाल के उपन्यास ''स्वर्ग दद्दा! पाणि पाणि'' में दलित विमर्श समाज की स्थिति को देखते हुए एक ज्वलंत विषय है। प्रस्तुत शोध पत्र आज–कल दलितों की स्थिति को लेकर उठते विवादों की पड़ताल करता है। दलितों के प्रति सवर्णों के दृष्टिकोण की विवेचना इस शोध पत्र में की गई है। दलित वर्ग के अन्तर्गत उन समस्त जातियों को सम्मिलित किया जाता है जिन्हें सदियों से लोगों द्वारा दबाकर रखा जाता रहा है। यही स्थिति 'स्वर्ग दद्दा! पाणि पाणि' उपन्यास में भी चित्रित होती है जहाँ पर सवर्णों द्वारा दलितों का जीना दूभर कर दिया जाता है। उनके साथ भेदभाव किया जाता है, पीड़ाएं, अपमान एवं शोषण दिया जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य उच्च वर्ग का अछूतों के प्रति हीनतम दृष्टि एवं उसके प्रभाव को विविध क्षेत्रों में उद्घाटित करने का रहा है। इस संबंध में विमर्श करने की परस्पर संभावनाएं एवं आवश्यकताएं बनी रहती है। उद्देश्य की इसी आवश्यकता को ध्यान में रखाकर प्रस्तुत शोध पत्र का विषय चुना गया है साथ ही दलितों की स्थिति एवं भूमिका को भी देखने का प्रयास किया गया है।

साहित्यावलोकन

लेखक विद्यासागर नौटियाल पर अभी तक मेरे संज्ञान से दो शोध कार्य किए गये है। जिनमें से एक शोध कार्य पूर्ण हो चुका है तथा दूसरा अभी पूर्ण नहीं हुआ है। पूर्ण शोध कार्य का शीर्षक ''विद्यासागर नौटियालः व्यक्तित्व एवं कृतित्व रहा है।

विद्यासागर नौटियाल यथार्थवादी कथाकार रहे हैं, जिनका संबंध ताउम्र पहाड़ों से रहा है। पहाड़ इनके लिए पर्यटकों एवं तीर्थटकों के समान मनोरंजन उपयोगी कभी नहीं रहा, अपितु वे पहाड़ की पीड़ा, दुःख–दर्द को सूक्ष्मता से विश्लेषित करते हैं। वह अपने साहित्य के माध्यम से निरन्तर समाज को सही मार्ग प्रेषित करते रहे हैं। समाज में फैली विसंगतियों, विद्रुपताओं, शोषण, भ्रष्टाचार, जातिगत संकीर्णता, अंधविश्वासों, रूढ़ियों, नारी स्थिति की दयनीयता आदि पर तीखा व्यंग्य करते रहे। पहाड़ की स्थिति का सजीवता से चित्रण करने के कारण उन्हें हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि **'प्रेमचंद'** के नाम से सम्बोधित करते हुए पहाड़ का प्रेमचंद कहा जाता है। नौटियाल जी का संपूर्ण साहित्य विविध विषयों को उनकी सम्पूर्णता के साथ चित्रित करने का प्रयास करता है। इस दृष्टि से उनका उपन्यास **'स्वर्ग ददा! पाणि पाणि'** दलित समाज की छवि को आत्मीयता के साथ विश्लेषित करता है।

दलित विमर्श महाराष्ट्र से एक आंदोलन के रूप में प्रस्फुटित हुआ है। दलित शब्द से उद्‌भूत होता है–दलन या दमन किया हुआ। समाज में निम्न स्तर के लोगों को 'अछूत' शब्द से सम्बोधित किया गया, क्योंकि इन लोगों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति दयनीय थी। ''ऐसी व्यवस्था में सदियों से अछूतों की सामाजिक, आर्थिक ,सांस्कृतिक एवं राजनैतिक स्थिति अत्यन्त दयनीय रही है। मंदिरों में उनके प्रवेश पर प्रतिबंध, खान–पान तथा मिलने जुलने में छूत–छात, शादी–विवाह में भेद–भाव ..... इत्यादि के कारण अछूतों की स्थिति जानवरों से बदत्तर रही है।''[1]

दलित चेतना प्राचीन काल से चली आ रही है। बुद्ध से लेकर आधुनिककाल तक इसकी परम्परा दिखाई देती है, परन्तु आज यह अपनी एक अलग पहचान और अस्तित्व के रूप में उभरकर सामने आती है। डॉ० भीमराव अम्बेड़कर इस पहचान के प्रतीक बनकर समाज के सामने आते हैं और इस आंदोलन में उनके संघर्ष को भूलाया नहीं जा सकता। वह इस धारा की नीड़ रहे हैं।

''मोहनदास नैमिषराय के अनुसार शोषक वर्ग के खिलाफ अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए समाज में समता, बन्धुता तथा मैत्री की स्थापना करना ही दलित साहित्य का उद्देश्य है।''[2]

कंवल भारती दलित विमर्श के सबंधं में लिखते हैं– ''दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गंदे काम करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतन्त्र व्यवसाय करने से मना किया गया है..... ।''[3]

इस प्रकार दलित चेतना समाज में प्रबल रूप में दिखाई देती है। अतः दलित साहित्य की परम्परा ने कविता, उपन्यास, आत्मकथाएँ आदि विधाओं के माध्यम से दलित समाज की पीड़ा, अपमान, शोषण आदि को उद्‌घाटित करने का निरन्तर प्रयास किया जा रहा है। इस प्रवृत्ति से सम्बन्धित कुछ रचनाएं निम्नवत् है– प्रेमचंद (गबन, गोदान, कर्मभूमि), जयशंकर प्रसाद (कंकाल), रामदरश मिश्र (सूखता हुआ तालाब), जगदीशचंद्र माथुर (धरती धन न अपना), दया पवार की आत्मकथा (अछूत), मोहनदास नैमिषराय की (अपने अपने पिंजरे), ओमप्रकाश वाल्मीकि (जूठन), दूधनाथ सिंह की कहानी (निष्कासन) आदि। इसी क्रम में विद्यासागर नौटियाल का उपन्यास 'स्वर्ग ददा! पाणि, पाणि'' भी विचार करने योग्य है। जिसमें दलित चेतना अर्थात् समाज में उनके यथार्थ को उद्‌घाटित किया गया है।

उपन्यास का आरम्भ सितानु सल्ली और उनके पूर्वजों की संघर्ष कथा से होता है। दलित मेहनतकश सितानु ने व्यक्तिगत लाभ से ऊपर उठकर बिना किसी मजदूरी के छः वर्षों के कठिन परिश्रम से सर्वजनों के लिए पानी का सोता निकाला। जहाँ कालांतर में उसके ही वर्ग के लिए पानी लाना एक संघर्ष कथा बन जाती है। सवर्णों द्वारा दलितों को एक हीनतम दृष्टि से देखा जाता था। उनके लिए वह सब एक अछूत है। जिनका स्पर्श सवर्णों को अपवित्र बना देता है। –''किसी सवर्ण का बर्तन होता तो वह वैसा कर लेती। लेकिन उसके बर्तन पर वह हाथ नहीं लगा सकती थी। हाथ लगा देने से उसके गीले हाथ के कारण उसमें अपने बर्तन में भरे हुए पानी को दूत लग जाती ..... जैसे मां करती थी दादी? हां, बेटा, जैसे तुम्हारी मां को कई मौकों पर अपने हाथ धोने पड़ जाते थे।''[4]

सवर्णों द्वारा इस वर्ग के लोगों की धारा और बस्ती भी अलग बना दी गई थी, जिनका अपनी धारा से अलग चलना गुनाह होता था –''वे और उनकी बिरादरी के दूसरे अछूत, ढलुवा पहाड़ के सीने पर ऊपर से नीचे की ओर फैले हुए गाँव में सबसे नीचे के इलाके में बनाई गई बस्ती में रहते थे। उनकी सूरत–शक्ल और पहनावे से ही झलक जाता था कि वे दलित घरों की औरतें हैं। नाक पर चढ़े बेहद पहले सूत उनकी जाति की सूचना देने के लिए काफी होते थे। गांव के सवर्ण जातियों के लोग, आम तौर पर डोमाणा की ओर जाने वाली उस बटिया पर नहीं चलते ..... आने जाने के लिए उनकी राह अलग थी।''[5]

सितानू का गाँव के हितार्थ पानी के सोते को एक उचित स्थान देने के लिए अन्य गाँववासियों से सहायता का अनुरोध किए जाने पर सवर्णों का अमानवीयता भरा व्यवहार इस उदाहरण में दिखाई पड़ता है –''उन फालतू कामों के लिए मजूर लगाना हम तो ठीक नहीं समझते ..... गांव की तरफ से कोई मजूर नहीं लगाया जाएगा। सितानू की तरह अपनी मर्जी से कोई मजूर काम करना चाहे तो वह बात अलग है। उसमें हमें कोई एतराज नहीं होगा..... गांव के मजूर का काम अछूत करते थे। उनमें से किसी की माली हालत ऐसी नहीं थी जो मजूरी पाए बिना सितानू के साथ डलो पर छेणी चला सके। सबको अपने बाल–बच्चे पालने थे।''[6]

दलितों का धारा से पानी लेने के लिए सवर्णों द्वारा अपमानित किए जाना, उन्हें घृणित दृष्टि से देखना निम्न उदाहरण में द्रष्टव्य होता है–''धारा को गंदा कर जाती हैं डोभिने धारा पर पानी भरती है और भरा हुआ बंठा सर पर रख कर यहाँ से चंपत हो जाती है। जैसे गाँव की बामणियाँ हो। हाँ। पानी भर लेने के बाद धारा को धोती तक नहीं है कभी। धारा को धोने के लिए जैसे इनका कोई नौकर बैठा हो गाँव में। बिट्टों के घरों की कोई औरत आएगी तो उसी अन–धुली धारा का छुतहा पानी बर्तन में भरकर अपने घर पहुंचा देगी। उस बेचारी को क्या मालूम हो पाएगा कि कुछ देर पहले ये मलेच्छा धारा को गंदा कर गई थी और उसके बाद धारा धोया गया नहीं था..... छिः, छिः। घिन आती है। ''छूतहा हो गया पानी घर ले जाएगें तो बीमार पड़ जाएगे। बच्चों के तन बदन पर फोड़े उग आते है।''[7]

सवर्णों की मान्यता रही है कि दलित अछूत है, नीच–जाति से है। इसलिए उन्हें सवर्णों की तरह जीवन जीने का कोई अधिकार नहीं है। उनकी नियति यही है कि वह हमेशा सवर्णों का सम्मान–सत्कार के लिए तत्पर रहे और ऐसे न करने पर उनको तिरस्कृत रूप में देखा जाना चाहिए– ''हमारी नकल करने लगती हैं। हमारी जैसी दिखाई देना चाहती है..... छिः, छिः। कैसी बुरी बात है? ये डोमनें पता नहीं क्या समझने लगी हैं अपने को। पहले ऐसा नहीं था, पहले छोटे लोग अपनी मर्यादा में रहते थे। सेवा भी कायदे से लगाती थी– सेमान्या

ठाकुर। सेमान्या ठाकुर तो उनकी जुबान से अब निकल ही नहीं सकता।''[8]

दलितों को धारा से पानी न लेने जाने के लिए उन्हें धार्मिक मान्यताओं से बांधा जाने लगा। सवर्णों द्वारा एक नीति बनाई गई कि उनका धारा से पानी लेना देवी–देवताओं को भी मान्य नहीं है। –''पानी–भरकर ले जाती हैं तो दूसरों का पानी तो गंदा मत किया करो। सबका धर्म–कर्म भ्रष्ट कर देती हैं। डांडें के ऊपर देवी बैठी है इतना तो याद रखना चाहिए ..... बिसला..... तुम्हारे ऐसे गंदे कामों से देवी–देवताओं को भी घिन आने लगती है। जम्मू देवी–देवताओं की आँखें सब कुछ देखती रहती हैं। बिसला तुम्हारे इस तरह के गंदे कर्मों से जानती हो क्या होगा? ..... जम्मू–हाँ। देवता नाराज होगें तो एक दिन हमों गाँव की धरती से पानी ही रूठ जाएगा। देवी का पानी।[9]

हरिजन बस्ती के लोगों का धारे पर पानी लेना दूभर हो गया है गाली सुनने को मिलती और धारे के पानी का धीरे–धीरे कम होने का कारण भी इन्हीं को बना दिया गया।

''डोमों को साफ–साफ कह दिया जाए कि उन्हें इस गांव में रहना है तो अपनी मर्यादा के भीतर रहे, कायदें से रहें। वैसे ही कायदे से रहें जैसे उनके पुरखे पुस्तों से, बापू–दादा के जमाने से रहते आए हैं।''[10]

धारा पर पानी की कमी न होने पर भी दलितों के लिए पानी लेना मुश्किल हो गया था, पानी भरना मानो डर के साथ जीना था। जैसे कोई चोरी का काम करने जा रहा हो। सवर्णों को न तो उनका स्वयं ही पानी ले जाना मंजूर था, न ही अपने द्वारा देना। इसके संबंध में निम्न उदाहरण दृष्टव्य है– ''उनकी औरतें धारा पर खड़ी न हों और देवी के पानी को अपने हाथ से छू कर गंदा न करें। उनको जब–जब पानी लेना हो गांव के बिट्टो के घरों से कोई मर्द या औरत अपने भाँड़े से पानी भरे और कायदे के मुताबिक उसे कुछ दूरी पर रखे हुए उनके भाँड़े के अंदर डाल दे– अजी हां, तब तो हम ही हो जाएँगे उनके गुलाम। ..... जैसे वे किसी बड़ी दावत में आमंत्रित आदरणीय मेहमान बनकर आए हो।''[11]

प्रधान द्वारा धारे पर पानी के कुछ नियम बना दिए गए परन्तु हरिजनों का उन नियमों को पालन करते हुए भी पानी लेना आसान नहीं था। नियमानुसार धारे से पानी अपनी–अपनी बारी से लिया जाएगा। सवर्णों ने यह भी मंजूर नहीं किया गया और उनके साथ दुर्व्यवहार करते रहे ''मेरा भाँडा इतना पीछे किसने धकेल दिया होगा?..... ..... क्रोध में उबलती बिसला ने अपना भाँडा कतार से हटा कर अपने हाथ में ले लिया, उसे लेकर वह आगे चली आई ओर उस भाँडे के पीछे खड़ी हो गई, जिसमें पानी भर रहा था..... धारे के नीचे रखे गए बर्तन के हटते ही बिसला अपना भांड़ा वहां पर रखने का झुकी। किसी ने पीछे से उसके चूतड पर कस कर लात मारी। वह लुढ़क कर आगे जा गिरी। ..... चोट खाने के बाद बिसला जमीन से उठी और खड़ी हो गई। उसके माथे से धार बहने लगी थी। ..... मैं प्रधान ठाकुर जी से पूछ लेती हूँ। वे क्या कहते हैं–हम अछूत कहाँ जाएँगे पानी भरने।''[12]

इस स्थिति की झलक हमें श्यौराज सिंह बैचेन के वक्तव्य में भी दिखाई पड़ती है–''आज नवीन विचारों के अभ्यूदय के कारण धार्मिक आडम्बरों और मान्यताओं के बोज से मुक्त होते ही इसी चेतना ने कि निम्न जातियों या अपने सहधर्मियों से हीन है, उनके हृदय में विद्रोह की आग को प्रचण्ड कर दिया।''[13]

सवर्णों ने हरिजनों के लिए अलग पेयजल योजना बनवाने का निर्णय लिया है जबकि दलित वर्ग जानता है कि उनकी यह योजना उनके हितार्थ नहीं, अपितु स्वयं के अस्तित्व को उच्च स्थान प्रदान करने के लिए है..... ''बहुत सोच कर सच्ची बात बोल रहा हूँ। यह पानी नहीं बंट रहा है।, पलास गाँव के टुकड़े–टुकड़े हो रहे हैं। अब गाँव के अछूत, बिट्टो की बराबरी पर कभी खड़े नहीं हो पाएँगे। एक बहुत गहरे गड्डे में धकेले जा रहे हैं हम सब लोग।''[14]

सवर्णों का इस तरह दलितों के लिए यह व्यवस्था करना उनका हितार्थ नहीं अपितु स्वयं का स्वार्थ है। वह अपने स्वार्थ के लिए दलितों को अपने समाज से पृथक कर देना चहाते हैं ताकि वह प्रतिदिन के इन क्रियाकलापों समस्यों से अलग हो सकें।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'स्वर्ग द्दा! पाणि पाणि' उपन्यास में सवर्णों द्वारा दलित समाज के शोषण को उजागर किया गया है। नौटियाल जी का समाज के वंचित वर्ग को प्रतिबिंबन करना साहित्य का उद्देश्य रहा है। चाहे वह दलित हो या कृषक। उनके अन्य उपन्यासों में भी हम वंचित वर्ग के प्रति उनके समर्थन को देख सकते हैं। आज समाज की सबसे बड़ी समस्या यही हैं कि शोषक वर्ग की संख्या बढ़ रही है और जो शोषित है उनका साथ देने वालों की संख्या घट रही है। कहीं दलितों की हत्या की जाती है तो कहीं कृषक आत्महत्या करने को मजबूर होता है। 'स्वर्ग ददा! पणि पाणि' में दिखाया गया है कि दलित समाज पानी की समस्या से जूझ रहा है। क्या यह आज के समाज का सच नहीं है। यह आज भी उतना ही सच है जितना की नौटियाल जी के समय में था। पानी जैसी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए दलित समाज का दोहन हमारे सामाजिक व्यवस्था पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करता है। अतः हमें समाज को उन्नतशील बनाने के लिए सबके साथ समानता एवं बन्धुत्व का व्यवहार करना चाहिए। जातिविहीन समाज की ओर बढ़कर ही हम विकास के पथ पर अग्रसर हो सकते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ० श्यौराज सिंह बैचेन, डॉ० देवेन्द्र चौबे–चिंतन की परम्परा और दलित साहित्य, पृ०15, नवलेखन प्रकाशन बिहार, 2000–2001।*
2. *ओमप्रकाश वाल्मीकि– दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र पृ० 22, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014*
3. *डॉ० अमरनाथ–हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृ० 17, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015*

4. *विद्यासागर नौटियाल–स्वर्ग दद्दा! पाणि पाणि, पृ० 26, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, 2010।*
5. *वहीं, पृ० 65*
6. *वहीं, पृ० 55*
7. *विद्यासागर नौटियाल–स्वर्ग दद्दा! पाणि, पाणि, पृ० 66*
8. *वहीं, पृ० 65*
9. *वहीं, पृ० 67*
10. *वहीं, पृ० 71*
11. *वहीं, पृ० 71*
12. *वहीं, पृ० 123*
13. *श्यौराज सिंह–उत्तर सदीं के हिंदी कथा साहित्य में दलित विमर्श, पृ० 30 अनामिका पब्लिशर्स एण्ड हिस्ट्रीब्यूटर्स, 2004*
14. *विद्यासागर नौटियाल–स्वर्ग दद्दा! पाणि पाणि पृ० 80 अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, 2010*